**ओ३म्**

**‘पं. गणपति शर्मा का वैदिक धर्म व महर्षि दयानन्द**

**के प्रति श्रद्धा से पूर्ण प्रेरणादायक जीवन’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

प्राचीनकाल में धर्म विषयक सत्य-असत्य के निणर्यार्थ शास्त्रार्थ किया जाता था। अद्वैतमत के प्रचारक स्वामी शंकराचार्य के बाद विलुप्त हुई इस प्रथा का उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में महर्षि दयानन्द ने पुनः प्रचलित किया। इसी शास्त्रार्थ परम्परा को पं. गणपति शर्मा ने अपने जीवन में अपनाया और यह सिद्ध किया कि किसी विषय में एक या अधिक मत होने पर उसका निर्णय शास्त्रार्थ द्वारा सरलता से किया जा सकता है।

**पं. गणपति शर्मा का जन्म राजस्थान राज्य के अन्तर्गत चुरू नामक नगर में सन् 1873 में पं. भानीराम वैद्य के यहां हुआ था। आप पाराशर गोत्रीय पारीक ब्राह्मण थे।** आपके पिता सच्चे ईश्वर भक्त थे और ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास पंडित गणपति शर्मा के जीवन में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। आपकी शिक्षा काशी और कानपुर आदि स्थानों पर हुई। 22 वर्ष की आयु तक आपने संस्कृत व्याकरण और दर्शनों का अध्ययन किया। जब आप अपने पैतृक स्थान चुरू आये तो वहां महर्षि दयानन्द के शिष्य व राजस्थान में वैदिक धर्म के महान प्रचारक **श्री कालूराम जी जोशी** के प्रभाव से आर्यसमाजी बने। आर्यसमाजी बनकर आपने वैदिक धर्म व संस्कृति का प्रचार का कार्य आरम्भ कर दिया।

सन् 1905 के गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार के वार्षिक उत्सव में आप सम्मिलित हुए थे। इस उत्सव में देश भर के आर्यसमाजों से भी लोग सम्मिलित हुए थे। लगभग 15 हजार श्रोताओं की उपस्थिति में आपने व्याख्यान दिया। इस व्याख्यान से आपकी विद्वता एवं प्रभावशाली प्रवचन शैली की धाक जम गई। सारे आर्यजगत का ध्यान आपकी ओर आकर्षित हुआ और इसके बाद आप आर्यसमाज के एक प्रमुख विद्वान के रूप में प्रसिद्ध रहे। गुरुकुल के उत्सव में मिया अब्दुल गफूर से शुद्ध होकर धर्मपाल बने सज्जन भी उपस्थित थे। गुरुकुल के आयोजन पर अपने विस्तृत समाचार एवं संस्मरण विषयक लेख में उन्होंने पं. गणपति शर्मा के व्याख्यान की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए लिखा था कि वह शब्दों में कुछ कहने में असमर्थ हैं। पंडित जी की ज्ञान प्रसूता वाणी का आनन्द तो सुनकर ही लिया जा सकता है।

पं. गणपति शर्मा की एक विशेषता यह भी थी कि वह बिना लाउडस्पीकर के 15-15 हजार की संख्या में 4-4 घटों तक धारा प्रवाह व्याख्यान करते थे। उनकी विद्वता एवं व्याख्यान में रोचकता के कारण श्रोता थकते नहीं थे। इसका एक कारण जन-जन में पंडित जी के प्रति श्रद्धा का होना भी था। **अपने युग के प्रसिद्ध नेता स्वामी श्रद्धानन्द ने इस संबंध में लिखा था कि ‘लोगों में पण्डित जी के प्रति श्रद्धा का कारण उनकी विद्वता एवं व्याख्यान कला नहीं, अपितु उनका शुद्ध एवं उच्च आचरण तथा सेवाभाव है।’** यही कारण है कि शास्त्रार्थ में वह जिस विधर्मी विद्वान से वार्तालाप करते थे वह उनका मित्र एवं प्रशंसक हो जाता था।

सन् 1904 में पसरूर (पश्चिमी पंजाब) में पादरी ब्राण्डन ने एक सर्व धर्म सम्मेलन का आयोजन किया। आर्यसमाज की ओर से इस आयोजन में पं. गणपति शर्मा सम्मलित हुए। **उनकी विद्वता एवं सद्व्यवहार का पादरी ब्राण्डन पर गहरा प्रभाव पड़ा और वह पं. जी का मित्र एवं प्रशंसक हो गया। इसके बाद उन्होंने जब भी कोई आयोजन किया वह आर्य समाज जाकर पं. गणपति को भेजने का आग्रह करते थे।** ऐसे ही अनेक उदाहरण और हैं जब प्रतिपक्षी विद्वान शास्त्रार्थ में पराजित होने पर भी उनके सदैव प्रशंसक रहे।

जहां पण्डित जी के व्यक्तिगत आचरण में सभी के प्रति आदर था वहीं धर्म प्रचार में भी वह सदैव तत्पर रहते थे। **सन् 1904 में उनके पिता एवं पत्नी का देहावसान हुआ। पिता की अन्त्येष्टि सम्पन्न कर आप धर्म प्रचार के लिए निकल पड़े और चूरु से कुरुक्षेत्र आ गये जहां उन दिनों सूर्यग्रहण पर मेला लगा था।** अन्य मतावलम्बियों ने भी यहां प्रचार शिविर लगाये थे। इस मेले पर पायनियर पत्रिका में एक योरोपियन लेखक का लेख छपा जिसमें उसने स्वीकार किया था कि मेले में आर्यसमाज का प्रभाव अन्य प्रचारकों से अधिक था। इसका श्रेय भी पं. गणपति शर्मा को है जो इस प्रचार के प्राण थे। **धर्म प्रचार की धुन के साथ पण्डित जी त्याग-वृत्ति के भी धनी थे।** **इसका उदाहरण उनके जीवन में तब देखने को मिला जब पत्नी के देहान्त हो जाने पर उसके सारे आभूषण लाकर गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर को दान कर दिये।**

पंडित जी ने देश भर में पौराणिक, ईसाई, मुसलमान एवं सिखों से अनेक शास्त्रार्थ किये एवं वैदिक धर्म की मान्यताओं को सत्य सिद्ध किया। **12 सितम्बर सन् 1906 को श्रीनगर (कश्मीर) में पादरी जानसन से महाराजा प्रताप सिंह जम्मू कश्मीर की अध्यक्षता में पंडित गणपति शर्मा जी ने शास्त्रार्थ किया।** पादरी जानसन संस्कृत भाषा एवं दर्शनों का विद्वान था। उसने कश्मीरी पण्डितों को शास्त्रार्थ की चुनौती दी थी परन्तु जब कोई तैयार नहीं हुआ तो पादरी महाराजा प्रताप सिंह के पास गया और उनसे कहा कि आप राज्य के पण्डितों से शास्त्रार्थ कराईयें अन्यथा उसे विजय पत्र दीजिए। **महाराज के कहने पर भी राज्य का कोई पण्डित शास्त्रार्थ के लिए तैयार नहीं हुआ, कारण उनमें विद्वता व शास्त्रार्थ करने की योग्यता न थी।** इस स्थिति से महाराजा चिन्तित व दुःखी हुए। इसी बीच महाराज को कहा गया कि एक आर्यसमाजी पण्डित श्रीनगर में विराजमान है। वह पादरी जानसन का दम्भ चूर करने में सक्षम है। राज-पण्डितों ने पंडित गणपति शर्मा का आर्य समाजी होने के कारण विरोध किया जिस पर महाराज ने पण्डितों को लताड़ा ओर शास्त्रार्थ की व्यवस्था कराई। पं. गणपति शर्मा को देख पादरी घबराया और बहाने बनाने लगा, परन्तु महाराजा की दृणता के कारण उसे शास्त्रार्थ करना पड़ा। शास्त्रार्थ में पण्डित जी ने पादरी जानसन के वैदिक दर्शनों पर किये प्रहारों का उत्तर दिया और उनसे कुछ प्रश्न किये? शास्त्रार्थ संस्कृत में हुआ। सभी राज-पण्डित शास्त्रार्थ में उपस्थित थे। पं. गणपति शर्मा जी के तर्कों व युक्तियों तथा वेद आदि शास्त्रों के कभी न देखे, सुने व पढ़े प्रमाणों व उनके अर्थों को सुनकर राजपण्डित विस्मित हुए। अगले दिन 13 सितम्बर, 1906 को भी शास्त्रार्थ जारी रहना था। परन्तु पादरी जानसन जी चुपचाप सिसक गये। वह जान गये थे कि आर्यसमाज के इस पर्वत के शिखर तुल्य ज्ञानी पण्डित पर शास्त्रार्थ में विजय पाना असम्भव है। इस विजय से पं. गणपति शर्मा की कीर्ति देशभर में फैल गई। कश्मीर नरेश महाराज प्रतापसिंह जी ने पण्डित जी का उचित आदर सत्कार कर उन्हें कश्मीर आते रहने की प्रार्थना की और निमन्त्रण दिया।

पं. गणपति शर्मा का वृक्षों में अभिमानी जीव है या नहीं, विषय पर आर्य समाज के ही सुप्रसिद्ध विद्वान व शास्त्रार्थ महारथी स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती से 5 अप्रैल 1912 को गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में शास्त्रार्थ हुआ था। दोनों विद्वानों में परस्पर मैत्री सम्बन्ध थे। यद्यपि इसमें हार-जीत का निर्णय नहीं हुआ फिर भी दोनों ओर से जो प्रमाण, युक्तियां एवं तर्क दिये गये, वह खोजपूर्ण एवं महत्वपूर्ण थे।

पं. जी का कुल जीवन मात्र 39 वर्ष का ही रहा। **वह चाहते थे कि वह व्याख्यान शतक नाम से पुस्तक लिखें। हमें लगता है कि पंडित जी इस व्याख्यानों की पुस्तक में एक सौ विषयों पर तर्क, युक्ति व प्रमाणों से पूर्ण व्याख्यान शैली में प्रवचन वा लेख देना चाहते थे।** इसी क्रम में उन्होंने मस्जिद मोठ में एक लीथो प्रेस भी स्थापित किया था परन्तु प्रचार कार्य में व्यस्त रहने व समयाभाव के कारण वह इस योजना को सफल न कर सके। उन्होंने मात्र एक पुस्तक **‘‘ईश्वर भक्ति विषयक व्याख्यान”** ही लिखी है। पंडित जी ने देश भर का भ्रमण कर वैदिक धर्म का प्रचार किया। **103 डिग्री ज्वर में भी आप व्याख्यान दिया करते थे।** **जीवन में रोगी होने पर भी आपने कभी विश्राम नहीं किया जिसका परिणाम आपकी अल्पायु में 27 जून सन् 1912 को मृत्यु के रूप में हुआ। वैदिक धर्म और आर्यसमाज की यह बहुत बड़ी क्षति थी।**

पण्डित जी ने अपने जीवनकाल में स्वयं को वैदिक धर्म के प्रचार के लिए समर्पित किया था। वर्तमान के आर्यसमाजों में पंडितजी जैसी त्यागपूर्ण भावनाओं का सर्वथा लोप हो गया दिखाई देता है। आज हमारे विद्वान जो अध्ययन-अध्यापन कार्यों से भी खूब धन कमाते हैं, दक्षिणा व यात्रा-व्यय लेकर ही कहीं प्रचार के लिए जाते हैं और रटे-रटाये भाषण देते हैं जिनका क्षणिक प्रभव होता है। इन विद्वानों का व्यक्तिगत जीवन आर्यसमाज के सिद्धान्तों से कितना मेल खाता है, कहा नहीं जा सकता। आर्यसमाज के उन विद्वानों, जो प्रतिष्ठा व स्वार्थ से ऊपर उठे हुए हैं और सच्चे ऋषि भक्त हैं, उन्हें विचार व चिन्तन कर समाज का मार्गदर्शन करना चाहिये जिससे आर्यसमाज की पुरानी प्रतिष्ठा व गौरव पुनः स्थापित हो सके।

आर्यकवि नाथूराम शंकर की पंडितजी पर निम्न पंक्तियों को प्रस्तुत कर लेख को विराम देते हैं:

**“भारत रत्न, भारती का बड़भागी भक्त, शंकर प्रसिद्ध सिद्ध सागर सुमति का।**

**मोह-तम-हारी ज्ञान पूषण प्रतापशील, दूषण विहीन शिरो भूषण विरितिका।।**

**लोकहितकारी पुण्य कानन विहारी वीर, वीर धर्मधारी अधिकारी शुभगति का।**

**देख लो विचित्र चित्र बांचलो चरित्र मित्र, नाम लो पवित्र स्वर्गगामी गणपति का।।”**

-**मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**